नक्सलवाद : भारतीय लोकतंत्र को चुनौती

मनोहर लाल कुशवाह
अतिथि विद्वान
हिन्दी विभाग
शासकीय विजयाराजे सिंधिया
महाविद्यालय भाण्डेर,
जिला दतिया (म.प्र.)

शबाना बानो
अतिथि विद्वान
भूगोल विभाग
शासकीय विजयाराजे सिंधिया
महाविद्यालय भाण्डेर,
जिला दतिया (म.प्र.)

बलवंत राज भदावर
शिक्षक,
जवाहर नवोदय विद्यालय,
बुलंदशहर (उ0 प्र0)

सारांश

प्रस्तुत शोधपत्र में भारतीय लोकतंत्र में नक्सलवाद की चुनौती का अध्ययन किया गया है। आज नक्सली आंदोलन 20 राज्यों के 230 जनपदों में फैल गया है। नक्सलवाद को समाप्त करने के अथक प्रयासों के बावजूद इसकी जड़ें और अधिक मजबूत होती गयीं। नक्सलवाद कानून–व्यवस्था से जुड़ी समस्या नहीं है। नक्सलवाद का मुख्य कारण आदिवासी समाज की खराब सामाजिक व आर्थिक स्थिति है। आजादी के बाद इन्हें मुख्य राष्ट्रीय जीवनधारा में शामिल नहीं किया गया। उन्हें जल, जंगल, जमीन से वंचित किया जा रहा है। वह शोषण एवं अन्याय का शिकार हो रहे हैं। परंपरागत सामाजिक संरचना में वंचित, पिछड़े, आदिवासियों को विकास का समुचित अवसर उपलब्ध कराया जाना चाहिये। दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति व जन सहभागिता एवं आपसी विश्वास से ही इस समस्या का समाधान संभव है।

मुख्य शब्द : आतंकवाद, नक्सलवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, जातिवाद, गरीबी, क्षेत्रीयतावाद, राजनीति का अपराधीकरण, महिलाओं के साथ यौन हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या आदि।

प्रस्तावना

वर्तमान युग मे लोकतंत्र का सर्वोच्च स्थान है। विश्व के सभी देश लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनाकर विकास करना चाहते हैं। इस बात का हमें गर्व है कि भारत में भी लोकतांत्रिक व्यवस्था विद्यमान है। हमारा देश विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है। हमारे यहाँ लोकतांत्रिक व्यवस्था सफलता से निरन्तर गतिशील है। भारतीय जनमानस में लोकतंत्र के प्रति अपार निष्ठा भी है। लेकिन इस सबके बावजूद भारतीय लोकतंत्र को अनेक गम्भीर चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है, इनमें प्रमुख हैं – आतंकवाद, नक्सलवाद, साम्प्रदायिकता, भ्रष्टाचार, बेरोजगारी, जातिवाद, गरीबी, क्षेत्रीयतावाद, राजनीति का अपराधीकरण, महिलाओं के साथ यौन हिंसा, कन्या भ्रूण हत्या आदि।

मौजूदा दौर में नक्सली हिंसा देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये सबसे बड़ा खतरा बन चुकी है। नक्सली हिंसा के बढ़ते दबाव के चलते हमारे तत्कालीन प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंह तक को संसद में यह स्वीकार करना पड़ा कि वर्तमान में नक्सली हिंसा देश की आंतरिक सुरक्षा के लिये सबसे बड़ा खतरा है। नक्सलवाद भी आतंकवाद का एक प्रकार कहा जा सकता है। वर्तमान में भारत चार प्रकार के आतंकवाद का सामना कर रहा है, वे हैं – कश्मीर में उग्रवादी आतंकवाद पृथकवाद द्वारा मजहवी राज्य की स्थापना के स्वप्न पर आधारित है। नागालैण्ड व मिजो आतंकवाद पहचान के संकट की स्थिति पर आधारित है। मणिपुर व त्रिपुरा का आतंकवाद परिवेदना की स्थिति पर आधारित है। बंगाल, बिहार, उड़ीसा, आंध्रप्रदेश, झारखण्ड, मध्यप्रदेश, छत्तीसगढ़, उत्तर प्रदेश के पूर्वी भाग में नक्सलवाद वर्ग विद्वेष पर आधारित है।

उद्देश्य

प्रस्तुत शोध पत्र का उद्देश्य नक्सलवाद तथा उसकी बढ़ती भयावहता का अध्ययन करना है। नक्सलवाद दिन–प्रतिदिन अपनी जड़े देश के प्रत्येक कोने में फैलाकर मजबूत कर रहा है इन सबका कारण है हमारे देश में मौजूद कुछ ऐसे स्वार्थी लोग जो इस समस्या को खत्म करने की बजाय इसे बढ़ावा दे रहे हैं। लोगों को जातिवाद, क्षेत्रवाद आदि के सहारे नई–नई समस्यायें पैदा कर रहे हैं। इसे हम राजनीतिक स्वार्थ से भी जोड़ सकते हैं। सामाजिक शोषण एवं असमानता का भी एक अभिन्न रिश्ता सदैव नक्सली विचारधारा से रहा है। नक्सलवादी आर्थिक एवं सामाजिक कारणों से उपजने वाले क्रोध एवं असंतोष का इस्तेमाल अपनी विचारधारा के अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के लिये करते हैं। आज कई नक्सली संगठन वैधानिक रूप से स्वीकृत राजनीतिक पार्टी बन गये हैं और संसदीय चुनावों में भाग भी लेते हैं।

अध्ययन क्षेत्र

नक्सलवाद का क्षेत्र सीमित नहीं है। यह देश के नहीं अपितु विश्व के प्रत्येक किसी न किसी क्षेत्र में किसी न किसी रूप में व्याप्त है तथा लोगो को प्रभावित कर रहा है। 18 मार्च, 1967 से 24 मई, 1967 के बीच सिलिगुड़ी परगना के 240 वर्गमील क्षेत्र में सर्वहारा समाज द्वारा की गई राजनीतिक कार्यवाही को नक्सलवाद कहा गया। स्वतंत्र भारत के इतिहास में नक्सलवाद ने एक नवीन राजनीतिक विचारधारा को जन्म दिया। पीड़ित, दुखी, शोषित, वंचित, तिरस्कृत, अपमानित, प्रताड़ित, उत्पीड़ित वर्ग समूहों का इससे जुड़ना स्वभाविक था। भारत में नक्सलियों की गहरी जड़ों का पता इसी से चलता है कि केन्द्रीय गृह मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार इस समय आन्ध्र, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, बिहार, महाराष्ट्र समेत 14 राज्य नक्सली हिंसा से बुरी तरह प्रभावित हैं। नक्सली भारत के नौ राज्यों के कुल 106 जिलों में अपना वर्चस्व स्थापित कर चुके हैं। इनमें से सर्वाधिक 22 जिले बिहार राज्य के हैं, जबकि ओडिशा के 19, आंध्रप्रदेश के 16, छत्तीसगढ़ के 16,झारखण्ड के 21, पश्चिम बंगाल के 4, महाराष्ट्र के 4, उत्तर प्रदेश के 3 तथा मध्य प्रदेश का एक जिला व्यापक रूप से नक्सली हिंसा व गतिविधियों से प्रभावित है।

उद्भव एवं परिक्षेत्र

आतंकवाद साधारण अपराध का नाम नहीं है, यह उस अघोषित युद्ध का नाम है, जो किसी देश की नीतियों को बदलवाने के उद्देश्य से उस देश के आम नागरिकों को अपनी हिंसा का शिकार बनाता है। भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत आतंकवाद विरोधी अधिनियम में आंतकवाद को परिभाषित करते हुये कहा गया है कि सरकार उन लोगों को आतंकित करने, विभिन्न वर्गों में वैमनस्य बढ़ाने व शांतिभंग करने, सम्पत्ति नष्ट करने, रसायन या अरसायनिक अस्त्र इस्तेमाल के उद्देश्य से जो भी कार्य किये जायेंगे, उन्हें आतंकवादी गतिविधि माना जायेगा। नक्सलवाद भी इसी श्रेणी में आता है।

नक्सलवाद का दर्शन वामपंथी उग्रवाद की विचारधारा से प्रभावित है। यह विचारधारा नक्सलवाड़ी आंदोलन के कार्यकर्ता चीनी नेता माओ–त्से–तुंग के उस सिद्धांत से निकल कर सामने आई है, जिसके अनुसार सत्ता तक केवल हिंसा के रास्ते ही पहुंचा जा सकता है। नक्सलवादी संवैधानिक एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था में तनिक भी विश्वास नहीं रखते हैं। इनके साहित्य में यह रेखांकित है कि बैलेट के जरिये नहीं, बल्कि बुलेट के जरिये एकदलीय शासन व्यवस्था स्थापित करने में विश्वास रखते हैं। बंदूक से सत्ता तक पहुंचने के अलावा 'मुक्त क्षेत्रों का निर्माण' तथा 'गांवो से शहरों को घेरना' जैसे सैद्धांतिक कथन भी इनकी विचारधारा के महत्वपूर्ण घटक हैं। नक्सलवादी प्रायः वैचारिक स्तर पर अत्यंत अंधविश्वासी माने जाते हैं। विचारों के प्रति यह कट्टरता ही उनके संगठन को मजबूती प्रदान करती है। इनकी विचारधारा में न दृष्टिकोण को छिपाया जाता है और न ही समझौतों आदि की गुंजाइश रहती है। ये एक अभियान के तौर पर निरंतर अपना दायरा बढ़ाने में लगे रहते हैं। सामाजिक शोषण एवं असमानता का भी एक अभिन्न रिश्ता सदैव नक्सली विचारधारा से रहा है। नक्सलवादी आर्थिक एवं सामाजिक कारणों से उपजने वाले क्रोध एवं असंतोष का इस्तेमाल अपनी विचारधारा के अनुयायियों की संख्या बढ़ाने के लिये करते हैं। आज कई नक्सली संगठन वैधानिक रूप से स्वीकृत राजनीतिक पार्टी बन गये हैं और संसदीय चुनावों में भाग भी लेते हैं।

भारत में नक्सली आतंकवाद का जन्म स्थान पश्चिम बंगाल के दार्जिलिंग जिले का 'नक्सलबाड़ी' नामक गांव है। यह गांव पश्चिम बंगाल में उस भारतीय पट्टी पर स्थित है, जों बांग्लादेश को नेपाल से पृथक करती है। यह स्थान एक ओर बांग्लादेश व दूसरी ओर तिब्बत का सीमावर्ती है। चूंकि नक्सली आंदोलन का सूत्रपात 'नक्सलबाड़ी' गांव से हुआ, अतएव यह आंदोलन 'नक्सलवाद' कहलाया। कार्ल मार्क्स के वर्ग संघर्ष के सिद्धांत के रूप मे नक्सलवाद व्यवस्था पश्चिम बंगाल के नक्सलबाड़ी से 1967 में कानू सान्याल, चारू मजूमदार, जंगल संथाल की अगुवाई में शुरू हुई। 1967 से प्रारम्भ हुई नक्सली हिंसा ने 1969 में भारतीय साम्यवादी दल (मार्क्सवादी व लेनिनवादी) की स्थापना के साथ ही पैर पसारना प्रारम्भ कर दिया। नक्सलवाद का प्रमुख कार्य व उद्देश्य लोकतांत्रिक राजनीति का पूर्ण विरोध व जनक्रांति के द्वारा भूमिहीन किसानों को संगठित कर गुरिल्ला पद्धति द्वारा भूपतियों या जमीदारों के विरूद्ध खूनी संघर्ष का तरीका अपनाना है। 18 मार्च, 1967 से 24 मई, 1967 के बीच सिलिगुड़ी परगना के 240 वर्गमील क्षेत्र में सर्वहारा समाज द्वारा की गई राजनीतिक कार्यवाही को नक्सलवाद कहा गया। स्वतंत्र भारत के इतिहास में नक्सलवाद ने एक नवीन राजनीतिक विचारधारा को जन्म दिया। पीड़ित, दुखी, शोषित, वंचित, तिरस्कृत, अपमानित, प्रताड़ित, उत्पीड़ित वर्ग समूहों का इससे जुड़ना स्वभाविक था।

भारत में लाल गलियारे का विस्तार थमने का नाम नहीं ले रहा है। भारत में नक्सलियों की गहरी जड़ों का पता इसी से चलता है कि केन्द्रीय गृह मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार इस समय आन्ध्र, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, झारखण्ड, बिहार, महाराष्ट्र समेत 14 राज्य नक्सली हिंसा से बुरी तरह प्रभावित हैं। नक्सली भारत के नौ राज्यों के कुल 106 जिलों में अपना वर्चस्व स्थापित कर चुके हैं। इनमें से सर्वाधिक 22 जिले बिहार राज्य के हैं, जबकि ओडिशा के 19, आंध्रप्रदेश के 16, छत्तीसगढ़ के 16,झारखण्ड के 21, पश्चिम बंगाल के 4, महाराष्ट्र के 4, उत्तर प्रदेश के 3 तथा मध्य प्रदेश का एक जिला व्यापक रूप से नक्सली हिंसा व गतिविधियों से प्रभावित है। इतना ही नहीं 20 राज्यों के 230 जनपदों में विद्यमान नक्सली पट्टियाँ इनके मजबूत संजाल (NETWORK) के लिये जानी जाती हैं। नक्सली देश के भीतर मजबूत पकड़ बना चुके हैं। देश के भीतर उनके 22,000 से भी ज्यादा सशस्त्र कैडर सक्रिय हैं, जबकि विभिन्न स्तरों पर सक्रिय नक्सलियों की संख्या 50,000 से भी ज्यादा बताई जाती है। देश के भीतर नक्सलियों के सक्रिय गुटों की संख्या 56 है। ये गुट अत्यंत दुस्साहस के साथ भारत में हिंसक घटनाओं को अंजाम दे रहे हैं। वर्ष 2012 में नक्सलियों ने 1412 हिंसक घटनाओं को अंजाम देकर देश की आंतरिक सुरक्षा को तार–तार किया। कई राज्यों में नक्सली समानांतर सरकारें चला रहे हैं। नक्सली गुटों में सिर्फ पुरूष ही नहीं, बल्कि महिलायें एवं बच्चे तक

सम्मिलित हैं, जो हिंसक घटनाओं में बढ़–चढ़कर हिस्सा लेते हैं।

नक्सलवाद की हिंसात्मक प्रवृत्तियाँ

आज भारत के हर कोने में नक्सलवादी आंदोलन कानून व्यवस्था को सीधी चुनौती देता नजर आ रहा है। यह देश की एकता व अखण्डता व आंतरिक सुरक्षा व्यवस्था के लिये खतरा बनता जा रहा है। अब यह राजनीति से ज्यादा हिंसा के कारण चिंता का बिषय बन रहा है। वर्तमान में नक्सलियों के द्वारा पी.डब्ल्यू.जी. के बैनर तले आदिवासियों के तथाकथित हितों के लिये 'पृथक दण्डकारण्य राज्य' की मांग की जा रही है। हमारी सरकारें इनसे निपटने में अक्षम साबित हो रही हैं। 25 मई, 2013 को जगदलपुर (छत्तीसगढ़) में नक्सलियों ने कांग्रेस पार्टी की 'परिवर्तन यात्रा' पर हमला बोलकर 29 लोगों को निर्ममतापूर्वक मौत के घाट उतार दिया था। इसके कुछ ही दिनों बाद 13 जून, 2013 को बिहार के जमुई रेलवे स्टेशन के पास नक्सलियों ने 'धनबाद–पटना इंटरसिटी ट्रेन' पर हमला कर खूनी खेल खेला। दिल दहला देने वाली इन हिंसक घटनाओं से तो यही निष्कर्ष निकलता है कि नक्सली आंदोलन अपना रास्ता भटक चुका है। नक्सलियों ने आम जनता को भी अपना निशाना बनाना शुरू कर दिया है। पूर्व गृह सचिव जी.के. पिल्लई ने स्वीकार किया कि अनेक उद्योगपतियों से 'शांति' के एवज में वाम उग्रवादी धन वसूलते हैं। तभी उनके प्रोजेक्ट चलने देते हैं। नक्सली संगठनों में शामिल महिलायें यौन उत्पीड़न का शिकार होकर एड्स जैसी बीमारी से ग्रसित हो रहीं हैं। एक हालिया प्रकाशित रिपोर्ट के आधार पर नक्सलियों को जंगलों में ''माईन्स'' से करोड़ों की आमदनी होती है। कई परियोजनायें इनके दखल के चलते लंबित पड़ी हैं। नक्सलवाद के विरूद्ध ऑपरेशन ग्रीन हंट, ग्रे हाउंड्स, सलवाजुडूम, एकीकृत कमान आदि अभियान चलाये गये। सलवा जुडूम अभियान पर सुप्रीम कोर्ट ने अवैध करार देते हुये रोक लगा दी थी। नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में विकास की योजनायें – रोशनी योजना व समन्वित कार्य योजना (Integrated Action Plan - IAP) भी चलायी गयीं। नक्सलवाद को समाप्त करने के अनेकों प्रयासों के उपरान्त भी उसे समाप्त नहीं किया जा सका। विडम्बना यह है कि जैसे–जैसे इस मर्ज की दवा की जा रही है, वैसे–वैसे यह मर्ज बढ़ता जा रहा है। यदि हम नक्सलवाद को कानून–व्यवस्था से जुड़ी समस्या मानकर इसके समाधान के प्रयास करेंगे, तो यह समस्या हल होने वाली नहीं है। हमें इस समस्या की जड़ को पहचानकर उस विकास को आगे बढ़ाना होगा, जिसमें आदिवासियों, शोषितों एवं वंचितों की समुचित भागीदारी सुनिश्चित हो और उनका वाजिब हक उन्हें मिले। इसके मूल में सामाजिक–आर्थिक कारण गहरे निहित हैं। यह समझने योग्य है कि आतंकवाद धर्म एवं भावनात्मक मुद्दों का सहारा लेकर आगे बढ़ता है, जबकि नक्सलवाद मजदूरों व आदिवासियों की सहानुभूति बटोरता है। नक्सली आंदोलन के भारत में सशक्त होने की मुख्य वजहें हैं – सामाजिक न्याय व समानता की कमी, समस्याओं की सरकारी स्तर पर उपेक्षा तथा आदिवासी समुदाय के हकों पर डाका। नक्सली आंदोलन ने उन्हीं क्षेत्रों में विशेष रूप से गति पकड़ी तथा अपने प्रभाव क्षेत्र को बढ़ाया, जो प्रायः आदिवासी बाहुल्य क्षेत्र के रूप में जाने जाते हैं। इन क्षेत्रों की विषम सामाजिक एवं आर्थिक स्थितियों के कारण यहां के निवासियों में इनसे मुक्ति की छटपटाहट थी, जो कि नक्सली विचारधारा का साथ और सहयोग मिलने के बाद उग्र हुई। स्थानीय सहयोग एवं समर्थन के कारण ही नक्सली जड़ों को गहराई तक जाने का मौका मिला। ज्यों–ज्यों आदिवासियों, भूमिहीनों व गरीब किसानों के शोषण एवं दमन के मामले बढ़े तथा इस पीड़ित एवं शोषित समुदाय को हाशिये पर ढकेला गया, त्यों–त्यों नक्सलवाद बढ़ता चला गया और नक्सली हिंसा में वृद्धि होती चली गयी। इसी के साथ ही नक्सलियों का जनाधार भी बढ़ता चला गया। असमानता एवं अत्यधिक शोषण के शिकार आदिवासी समुदायों के भरपूर समर्थन एवं सहयोग के कारण ही वर्तमान में देश के वनों के एक तिहाई से भी अधिक भाग पर नक्सलियों की हुकूमत चल रही है। नक्सली हिंसा से जुड़ी घटनाओं के उपलब्ध आंकड़ों पर गौर करने से यह नहीं कहा जा सकता कि नक्सली हिंसा में कमी आई है। उलटे इन हिंसक घटनाओं के बीच नक्सली प्रभाव क्षेत्र में विस्तार होता चला गया। 'इंस्टीट्यूट ऑफ डिफेंस रिसर्च एंड एनालिसिस' की रिपोर्ट में भी नक्सली प्रभाव क्षेत्र में विस्तार की बात को स्वीकारा गया है। वर्ष 2003 से वर्ष 2012 तक का दस वर्षों का समय एवं इसके बाद से अब तक का समय नक्सली हिंसा एवं मारकाट की दृष्टि से बेहद संवेदनशील माना जा सकता है। नक्सली हिंसा से जुड़ी घटनाओं के उपलब्ध आंकड़ों पर गौर करने से पता चलता है कि वर्ष 2003 में 1597, वर्ष 2004 में 1800, वर्ष 2005 में 1608, वर्ष 2006 में 1509, वर्ष 2007 में 1565, वर्ष 2008 में 1591, वर्ष 2009 में 2258, वर्ष 2010 में 2213, वर्ष 2011 में 1760 तथा वर्ष 2012 में 1412 घटनायें नक्सली हिंसा की दर्ज की गईं। आखिर भारतीय राज्य और आदिवासी भारत के बीच शत्रुतापूर्ण अन्तर विरोध हिंसक रूप में क्यों उपस्थित है ? तथा कथित लाल गलियारा क्यों अस्तित्व में आया ?

भारी पैमाने पर खनिज एवं वन सम्पदा से भरपूर आदिवासी बहुल विशाल भू–क्षेत्र पर मालिकाना हक से आदिवासियों को औपनिवेशिक काल से वंचित रखा गया। आजादी के बाद भी इनकी सामाजिक व आर्थिक स्थिति में कोई सुखद परिवर्तन नहीं आया, इन्हें निराशा ही हाथ लगी। जबकि आजादी की लड़ाई में आदिवासी समुदाय द्वारा बढ़–चढ़कर हिस्सा लिया गया। इस समुदाय के विरसा मुंडा जैसे क्रान्तिकारी साम्राज्य विरोधी लड़ाई के इतिहास में गौरवशाली स्थान रखते हैं। आजादी के बाद आदिवासी क्षेत्रों में विकास के समुचित प्रयास नहीं किये गये और न ही इन्हें मुख्य राष्ट्रीय जीवनधारा में जोड़ा गया। ऋणग्रस्तता, भूमिहीनता, पलायन व खुदकुशी इन क्षेत्रों के जीवन का अविभाज्य हिस्सा रहे हैं। भारत में विगत दो दशकों में जल, जंगल व जमीन इन तीनों का बेतहाशा दोहन हुआ है। निस्संदेह इस विस्फोट ने भारतीय राज्य और विकास के रणनीतिकारों के समक्ष गम्भीर चुनौती प्रस्तुत की है। जैसे–जैसे वैश्वीकरण की तीन आधारभूत प्रक्रियायें उदारीकरण, निजीकरण व विनिवेशीकरण तीव्र होंगी, उतना ही दबाव जल, जंगल व जमीन पर बढ़ता

जायेगा। इसलिये इस संघर्ष से निपटने के लिये तीन अंगों के बीच पूर्ण तालमेल जरूरी है। विकास के नाम पर सरकारें प्रायः आदिवासियों को विस्थापित व वंचित करती रहीं, जिससे उनमें असंतोष और आक्रोश बढ़ा। भूमंडलीकरण के अविर्भाव के साथ आदिवासी क्षेत्रों में कारपोरेट जगत के दखल ने स्थितियों को और बिगाड़ा। कारपोरेट जगत का मकसद वन एवं खनिज सम्पदा का अधिकाधिक दोहन है। वन सम्पदा के प्राकृतिक एवं पारम्परिक उपयोग पर जीवित रहने वाला आदिवासी समुदाय आहत हुआ और उसे विस्थापन जैसी नई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। सरकार द्वारा आदिवासियों की भूमि अधिकारों की रक्षा पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। गौरतलब है कि भूमि छिन जाने पर आदिवासी कल्याण की योजनाओं का कोई विशेष महत्व नहीं रह जाता है। कुछ समय पूर्व योजना आयोग द्वारा आदिवासियों की भूमि व्यवस्था के संबंध में एक अध्ययन समूह का गठन प्रो. बी.के. बर्मन की अध्यक्षता में किया गया। प्रो. बर्मन ने उड़ीसा के कुछ स्थानों के भू–सर्वेक्षण के बाद यह निष्कर्ष दिया कि जिस भूमि का वहॉ के आदिवासी उपयोग कर रहे थे, उसमें से मात्र एक प्रतिशत पर ही उनके अधिकार को रिकॉर्ड किया गया था। इस तरह सरकारी रिकॉर्ड में दर्ज न होने के कारण आदिवासियों की जमीन छिनती रहती है। आदिवासियों द्वारा की जाने वाली 'झूम खेती' पर अनुचित तरीके से प्रतिबंध लगाये जाने से भी उनमें असंतोष बढ़ा। इस विश्लेषण से स्पष्ट है कि सरकार की दोषपूर्ण नीतियों, उपेक्षा एवं तंत्र में व्याप्त भ्रष्टाचार से आदिवासियों, भूमिहीनों, वंचितों, शोषितों में व्याप्त आक्रोश ने नक्सलवाद को फलने–फूलने के पर्याप्त अवसर और उर्वरा भूमि प्रदान की।

नक्सलवाद को दूर करने के उपाय

नक्सली आतंकवाद चाहे किसी भी रूप मे हो सहन नहीं किया जा सकता। विकासात्मक कार्यों में स्थानीय लोगों की भरपूर भागीदारी को सुनिश्चित कर जहां हम नक्सलवाद की पृष्ठभूमि तैयार करने वाले असंतोष व आक्रोश को निर्मूल कर सकते हैं, वहीं नक्सल प्रभावित क्षेत्रों का पिछड़ापन दूर कर आदिवासियों को राहत भी दे सकते हैं। जाने–माने कम्युनिस्ट लेखक हावर्ड फास्ट का यह कथन विशेष रूप से उल्लेखनीय है – 'कम्युनिस्टों को बल से नहीं हराया जा सकता, किंतु सच्चाई के प्रयोग से वे वैसे ही गलकर नष्ट हो जाते हैं, जैसे वर्षा से नमक'। नक्सलवाद को समाप्त करने के लिये दृढ़ राजनीतिक इच्छा शक्ति की आवश्यकता है। नक्सलवाद के विरूद्ध लड़ाई को प्रभावी बनाने के लिये सुरक्षित विकास की दोहरी रणनीति अपनानी होगी। साथ ही यह सुनिश्चित करना होगा कि विकास योजनायें आदिवासियों के विस्थापन का कारण न बनें। राज्य के पास अपनी पुलिस को आधुनिक करने के लिये समुचित संसाधन नहीं हैं, सरकारों के मध्य समुचित तालमेल का अभाव है। यदि अब कदम नहीं उठाये तो यह आन्तरिक सुरक्षा के क्षेत्र में गम्भीर भूल होगी। उनकी गुरिल्ला युद्ध प्रणाली से निपटने के लिये सक्षम सैन्य रणनीति की आवश्यकता है।

स्थानीय जमीनी सच्चाइयों के मद्देनजर केन्द्र से अतिरिक्त सुरक्षा बल की मांग करने वाले प्रशासन को विकास का लाभ निम्न स्तर पर पहुँचाने व असमानता की खाई को दूर करने का काम भी करना होगा। हम अपनी नीतियों, स्वच्छ शासन व्यवस्था एवं न्यायिक दृष्टिकोण का परिचय देकर विश्वास बहाल कर सकते हैं, जिसके अच्छे परिणाम सामने आयेंगे। विश्वास तभी बहाल होगा जब नक्सल प्रभावित क्षेत्रों के लोगों के स्वामित्व एवं नियोजन के अधिकारों का विशेष ध्यान रखा जाये। ऐसे प्रयास किये जायें कि उपेक्षित तबकों को यह महसूस हो कि उन्हें वास्तव में राष्ट्र की मुख्यधारा से जोड़ने और समस्याओं के मकड़जाल से छुटकारा देने के दिल से प्रयास हो रहे हैं। यह भी जरूरी है कि नक्सल प्रभावित क्षेत्रों में काम कर रही विभिन्न एजेंसियों में परस्पर सहयोग व समन्वय बढ़ाया जाये, ताकि सरकार द्वारा लागू योजनाओं एवं नवीनतम पहलों का सर्वोत्तम परिणाम मिल सके। समस्या का निदान तब ही निकाला जा सकता है जब उसके कारण को तटस्थ भाव से जानने का प्रयास किया जाये। अलकायदा व नक्सलवाद दो अलग–अलग आंदोलन हैं। इनसे एक समान तरीकों से नहीं निपटा जा सकता है। बंदूक से आदमी को मारा जा सकता है, विचार को नहीं। सूली पर आदमी को लटकाया जा सकता है, विचार को नहीं। हथियार से विचार को मारने की कोशिश उसके विस्तार को ही गति प्रदान करती है। सरकार, पुलिस और प्रशासन को सच में संवेदशील बनना पड़ेगा ताकि व्यवस्था के प्रति आम आदमी का गुस्सा कम हो सके। जनाक्रोश को कानून व्यवस्था का मुद्दा बनाकर उससे निपटने की रणनीति जनाक्रोश को और उभारती है। दिल्ली में जब बाबा रामदेव के समर्थकों पर आधी रात को पुलिस की सहायता से हमला किया गया जिसकी कोई आवश्यकता नहीं थी और समाजसेवी अन्ना हजारे के आंदोलन से निपटने के लिये कानून व्यवस्था के मुद्दे को बहाना बनाया या संसद की सर्वोच्चता को अपनी ढाल बनाने की कोशिश की तो हम सहज कल्पना कर सकते हैं कि निरीह आदिवासियों के साथ जंगलों में क्या होता होगा।

निष्कर्ष

यह कुल मिलाकर एक वैचारिक लड़ाई है। नक्सलवाद भ्रांति और नागरिक समाज के बीच देश की शान्ति और उन्नतिप्रिय जनता को अपनी सरकार और नक्सलियों दोनों पर अंकुश लगाने के लिये यह लड़ाई लड़नी है। राजसत्ता पर अगर अंकुश नहीं लगा तो यह अमानवीय और निरंकुश हो जाती है तथा अगर जनता जागरूक न हो तो अतिवादी विचार उसके ही भीतर फैलने लगते हैं और निरंकुश सरकार और अतिवादी तत्व दोनों ही एक दूसरे के खिलाफ हिंसक कार्यवाही को उचित ठहराते हैं। इस बीच में आम जनता पिसती है। जनसहभागिता व आपसी विश्वास तथा राष्ट्रीय स्तर पर सूचना व कार्यवाहियों का समन्वय इस समस्या को जड़ से उखाड़ने में सक्षम हो सकता है। वहां की जनता को विश्वास दिलाना होगा कि शासन व पुलिस उनकी शुभचिन्तक है। जब तक स्थानीय लोग नक्सलवाद के विरूद्ध खड़े नहीं होते, उन्हें शरण देने से इन्कार नहीं करते, इनका सफाया किया जाना मुश्किल है। जब तक आदिवासी समाज की सामाजिक आर्थिक समस्यायें विद्यमान रहेंगी तब तक नक्सलवादी या समाज का अन्य कोई भी अतिवादी गुट उनकी समस्याओं की आड़ लेकर उनका लाभ उठाने व अपना स्वार्थ सिद्धि का प्रयास

करते रहेंगे। जनकल्याणकारी योजनाओं को यथार्थ के धरातल पर उतारकर हम नक्सलियों पर एक ऐसा नैतिक दबाव भी बना सकते हैं, जो उन्हें लोकतांत्रिक ढ़ंग से अपनी बात रखने को विवश करेगा।

इसी भारतीय जनता ने औपनिवेशिक साम्राज्यवाद के खिलाफ शानदार संघर्ष किया था और अपने संविधान को अंगीकृत व आत्मार्पित किया था। इसलिये समाज और संविधान की रक्षा की अंतिम जिम्मेदारी भी उसी की है। अगर ऐसा नहीं हुआ तो राष्ट्रहित जैसी कोई चीज नहीं बचेगी और महान भारतीय जनता का भी अस्तित्व नहीं रहेगा। अतः हम सबको मिलकर लोकतंत्र को चुनौती देने वाली इस गंभीर समस्या का हल ढूँढ़ना ही पड़ेगा।

संदर्भ

1. परीक्षा मंथन भाग : 1, वार्षिकांक – 2014 संपादक – अनिल अग्रवाल, प्रधान कार्यालय : 7ट/5 ताशकंद मार्ग सिविल लाइंस, इलाहाबाद – 211001
2. सबलोग, दिसम्बर 2009
3. डॉ. वीरेन्द्र सिंह यादव, 'नई सहस्त्राब्दी का आतंकवाद संघर्ष के बदलते प्रतिमान' आमेगा पब्लिकेशन दिल्ली 2010
4. आचार्य बालचन्द्र गोस्वामी 'प्रखर' संसदीय लोकतन्त्र सफल या असफल, राज पब्लिसिंग हाउस, 2007
5. समयान्तर, जनवरी 2012